कबीर & CLIMATE

Kabir Festival 2025

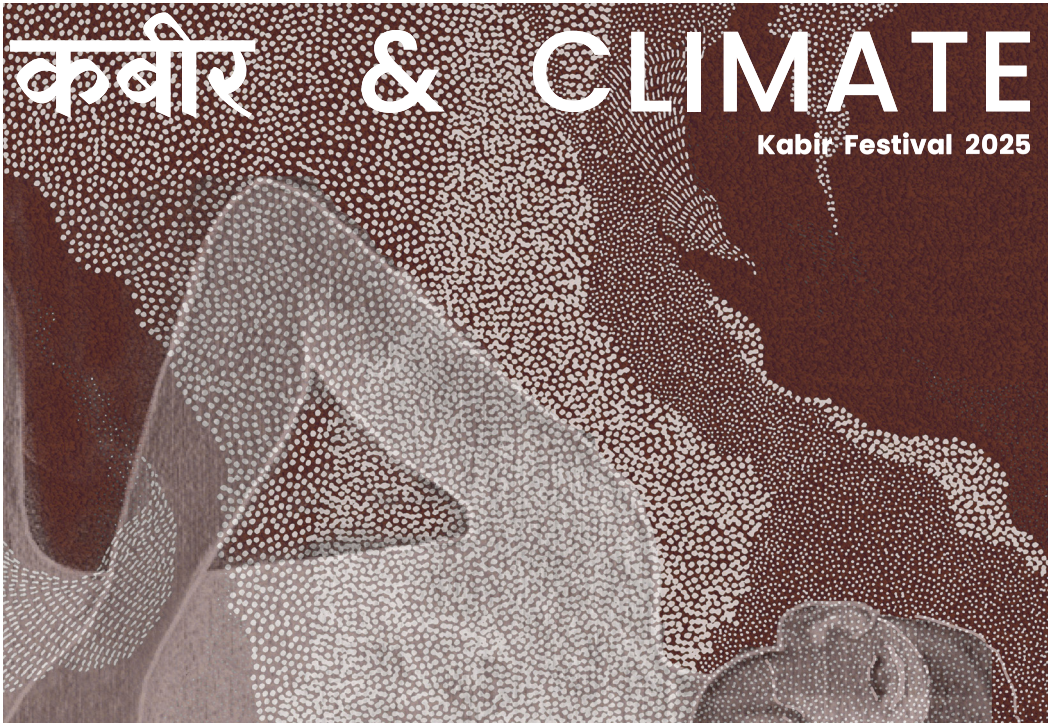

This material is copyleft. It may be used freely for social purposes to spread awareness, but not for commercial gain. The only request is to credit the Ecological Society, Pune.

The book has been published to better engage the audience during Satsang “Kabir & Climate”, a performance by music band PRALAY, for Kabir Festival organized by Baithak Foundation.

It is an effort to bring “climate action” in the main stream discussion.

कबीर & CLIMATE

CREDITS
Text : Ketaki Ghate, Kedar Bhagwat
Graphics : Studio Aatman

About ES

Ecological Society is a trust dedicated to ecological and environmental education and research since 1982. Friends of Ecological Society (FES) is an informal group of alumni from the "Ecological Society". As FES members, we aim to share our ecological and environmental knowledge with diverse sections of society through every possible medium.

We believe that music, as one of the most universally loved art forms, can effectively connect with people across all social and economic backgrounds.

About Pralay

Pralay is a band formed by FES to reach out to society through music. The name "Pralay" (meaning catastrophe or destruction) reflects the various calamities we are witnessing globally due to climate change. To raise awareness about the severity of these issues and inspire action from everyone, we must share our ecological and environmental knowledge through all possible forms—music being one powerful medium. Our goal is to create music that resonates across all communities, touching hearts and uniting humanity.

अनुक्रमणिका

०१	पहाट-गान	०१
०२	जाणे अज मी अजर	०३
०३	सुनता हे गुरु ज्ञानी	०७
०४	जरा हलके गाडी हाको	०९
०५	रुणु झुणु रे भ्रमरा	१३
०६	तू का तू	१५
०७	ओ चिंतु	१७
०८	घट घट में	१९
०९	निर्भय निर्गुण	२१
१०	कांची से काया	२३
११	जग बौराना	२५
१२	साधो रे	२७
१३	माटी कहे कुम्हार से	२९
१४	धीरे धीरे रे मना	३१
१५	वृक्षवल्ली आम्हा सोयरे	३३
१६	अवघा रंग एक झाला	३५
१७	चादर झिनी	३९

पहाट-गान

रातव्याने धीमे- धीमे रात्रीचा थांबविला ताल,
अन् येतसे झिणा- झिणा पाऊस अलवार
भृंगराज देई नव्या पहाटेच्या नांदीचा टोल,
अंधारात मारी सूर खंडयाचा खर्ज स्वर
कुकुट-कुंभा घुमे घोगरा कुठे डहाळीवर,
चिपके बेडूक धरीती ताल पाना-पानाआड
गातो पावशा, पेरते व्हा! जीवनरस उल्हास,
अन् कारुण्य-कोकीळ आळवितो करूणास्वर
शामा, दयाळ सुरू करीती तानांचा रीयाज,
अंध:कार भेदत अवतारे मयूराचा केकारव
मैना-रावे थव्या थव्याने बोलत झाले हुशार,
“सवेरी हो!” अशी येते बांग उजळता पाऊलवाट
जांभळ्या झरी नीलकस्तूर घाली शीळ उनाड,
शीळ-शीळोप्यास आले सुभग, शिंपी, शींजीर
कुटूरगा अन् तांबट देती क्षणाक्षणाची लय,
वटवटे, धोबी, सातभाईंची झाली सुरू रेलचेल
सागे सखा-सिद्धा, मन होतसे नित्य दंग,
ऐकता असे अनवट अवीट पहाट-गान

रचना : सिद्धार्थ बिनीवले

जाणे अज मी अजर

जाणे अज मी अजर । अक्षय मी अक्षर ।
अपूर्व मी अपार । आनंद मी ॥

अचळ मी अच्युत । अनंत मी अद्वैत ।
आदि मी अव्यक्त । व्यक्तही मी ॥

ईश्य मी ईश्वर । अनादि मी अमर ।
अभय मी आधार । आधेय मी ॥

स्वामी मी सदोदित । सहज मी सतत ।
सर्व मी सर्वगत । सर्वातीत मी ॥

नवा मी पुराणु । शून्य मी संपूर्णु ।
स्थुळ मी अणु । जें कांहीं तें मी ॥

अक्रिय मी एक । असंग मी अशोक ।
व्याप्य मी व्यापक । पुरुषोत्तम मी ॥

अशब्द मी अश्रोत्र । अरूप मी अगोत्र
सम मी स्वतंत्र । ब्रह्म मी पर ॥

ऐसें आत्मत्वें मज एकातें । इया अद्वयभक्ती जाणोनि निरुतें ।
आणि याही बोधा जाणतें । तेंही मीचि जाणें ॥

रचना : संत ज्ञानेश्वर

The ecological thought begins with living life “cautiously” !
Can we pause for a moment and reflect ..
How do we really live our life ? How do I want to live ?
Are we being consumed by materialism, emotions and duality ?

Abhang by Dnyaneshwar can be seen as a profound journey of self-realization, where the search for one’s true self - the AATMAN, is inherently linked to the divine - BRAHM. The self, understanding its oneness with the universe, transcends all dualities - He refers to himself as both gross **(स्थुल)** and subtle **(अणु)**, indicating that these seemingly opposing states coexist in unity. He identifies himself as both the manifest **(व्यक्त)** and unmanifest **(अव्यक्त)**, pointing to a state beyond visible and invisible divisions. The realization of this ‘unity’ comes out beautifully in this abhang. The “Self” is not separate from the “whole”, nor bound by individual identity, but is the divine presence itself.
Abhang’s call for unity and transcendence mirrors many ecological truths: everything is connected, everything is part of a greater whole, and the essence of all life is one. Dnyaneshwar suggests the self is inseparable from the whole, and Ecology teaches us that species, ecosystems, and Earth itself are all intimately connected - none can exist in isolation without affecting the others.

सुनता हे गुरु ज्ञानी

सुनता हें गुरु ज्ञानी गगन में आवाज होवे झीणा झीणा

ओहम सोहम बाजा रे बाजे, त्रिकुटी शबद निशाणी
इंगला रे पिंगला सुखमण जोया, श्वेत ध्वजा फहराणी
गगनमें आवाज होवे झीणा झीणा

वहा से आया नाद बिंद से, यहां जमावात पानी
सब घट पुरन बोली रहा हैं, अलख पुरुष निर्वाणी
गगनमें आवाज होवे झीणा झीणा

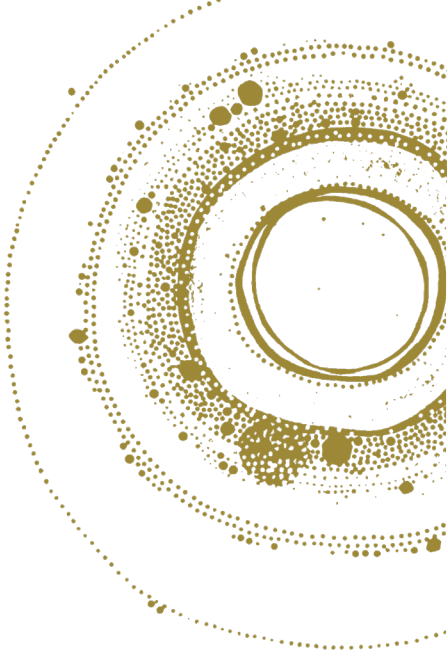

वहां से आया पता लिखाया, तृष्णा नाही बुझाणी
अमृत छोड विषय रस पिवे, उल्टी फास फसाणी
गगनमें आवाज होवे झीणा झीणा

देखा दिन जितना हो जग देखा, सहज अमर निशाणी
कहे कबीर सुनो भाई साधो, अगम निगम की ये बाणी
गगनमें आवाज होवे झीणा झीणा

रचना : कबीर

जरा हलके गाडी हाको

जरा हलके गाडी हाको, मेरे राम गाडी वाले
जरा धीरे धीरे गाडी हाको, मेरे राम गाडी वाले

गाडी म्हारी रंगरंगीली, नी पैया हे लाल गुलाल
हाकण वाली छैलछाबिली नी बैठण वाला राम
जरा हलके गाडी हाको, मेरे राम गाडी वाले

गाडी अटकी रेत में, रे भाई, मजल बडी है दूर
धर्मी धर्मी पार उतर गया, पापी चकनाचूर
जरा हलके गाडी हाको, मेरे राम गाडी वाले

देस देस का वैद बुलाया, लाया जडी और बुटी
जडी बुटी तेरे काम ना आयी, जड राम के घर की छुटी
जरा हलके गाडी हाको, मेरे राम गाडी वाले

चार जना मिल माथो उठायो, बांधी काठ की घोडी
ले जाके मरघट पे रखदी, फूक दिनी जस होली
जरा हलके गाडी हाको, मेरे राम गाडी वाले

बिलख बिलख कर तिरीया रोवे, बिछड गई मेरी जोडी
कहे कबीर सुनो भई साधो, जीन जोडी उन तोडी
जरा हलके गाडी हाको, मेरे राम गाडी वाले,
जरा धीरे धीरे गाडी हाको, मेरे राम गाडी वाले
जरा हलके गाडी हाको, जरा प्यार से गाडी हाको,
दुलार से गाडी हाको, मेरे राम गाडी वाले

रचना : कबीर

In this poem, Kabir uses the metaphor of a colorful cart driven by a carefree person to represent life. However, he warns that life, like the cart, gets stuck in the sand due to distractions and atiachments. No matier how much we try to solve our problems with material solutions like herbs, they won't work if we've lost our connection to the divine. Kabir reminds us that true peace and liberation don't come from external fixes, but from spiritual wisdom and devotion. Even when we cry over the separation from our beloved, Kabir teaches us that it is the same divine presence that unites and separates us !

The ecological crisis cannot be solved with temporary solutions; we must reconnect with nature and adopt sustainable practices to restore balance and harmony with the Earth.

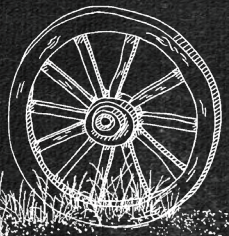

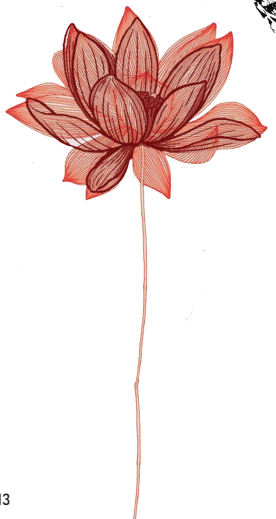

रुणु झुणु रे भ्रमरा

रुणुझुणु रुणुझुणु रे भ्रमरा
सांडीं तूं अवगुणु रे भ्रमरा ॥ धृ॥

चरणकमळदळू रे भ्रमरा ।
भोगीं तूं निश्चळु रे भ्रमरा ॥ १॥

सुमनसुगंधु रे भ्रमरा ।
परिमळु विद्रदु रे भ्रमरा ॥२॥

सौभाग्यसुंदरू रे भ्रमरा ।
बाप रखुमादेविवरू रे भ्रमरा ॥३॥

रचना : संत ज्ञानेश्वर

तू का तू

इनका भेद बता मेरे अवधू, अच्छी करनी कर ले तू
डाली फूल जगत के माही, जहाँ देखू वहा तू का तू

हाथी में हाथी बण बैठो, चीटी में है छोटो तू
होए महावत उपर बैठे, हाकण वाला तू का तू

चोरो के संग चोरी करता, बादमशो में भेळो तू
चोरी करके तू भग जावे, पकडने वाला तू का तू

मंगतो होकर मागंण लागे, देणे वाला तू का तू

नर नारी में एक बिराजे, दो दुनिया में दिसे क्यू
बालक होकर रोवण लागे राखण वालो तू का तू

जल थल जीव में तू ही बिराजे, जहाँ देखू वहा तू का तू
कहे कबीर सुनो भई साधो गुरु मिला हे ज्यू का त्यु

रचना : कबीर

ओचिन्तु

ओचिन्तु कोई मने रस्ते मळे ने कदी, धीरे थी पूछे के केम छे
तो आपणे तो कहिए की दरिया सी मौज माने ऊपरथी कुदरत नी रेहम छे

फाटेला खिस्सा नी आड मा मुकी छे अमे,
छलकाती मलखाती मौज
एकलो उभु ने तोये मेळा मा हूं
एवु लाग्या करे छे मने रोज
टाळु वसाए नहिं एवढी पटारी मा
आपणो खजाणो हेम-खेम छे
तो आपणे तो कहिए के दरिया सी मौज मान

ओचिन्तु कोई मने रस्ते मळे ने कदी, धीरे थी पूछे के केमछे,
तो आपणे तो कहिए की दरिया सी मौज माने ऊपरथी कुदरत नी रेहम छे

आँखों मा पाणी तो आवे ने जाये
नथी भीतर विनाश थती ओछी
वध घट नो कंठाओ राखे हिसाब नथी
परवाह समंदर ने होती
सूरज तो उगे अने आथमिये जाये
मारी ऊपर आकाश एम-नेम छे
तो आपणे तो कहिए के दरिया सी मौज माने ऊपरथी कुदरत नी रेहम छे

ओचिन्तु कोई मने रस्ते मळे ने कदी, धीरे थी पूछे के केमछे,
तो आपणे तो कहिए की दरिया सी मौज माने ऊपरथी कुदरत नी रेहम छे

रचना : ध्रुव भट

घट घट में

घट घट में पंछी बोलता ॥धृ॥

आप ही दंडी, आप तराज़ू ,
आप ही बैठा तोलता ॥१॥

आप ही माली, आप बगीचा ,
आप ही कलियाँ तोड़ता ॥२॥

सब बन में सब आप बिराजे ,
जड़ चेतना में डोलता ॥३॥

कहत कबीरा सुनो भाई साधो ,
मन की घूंडी खोलता ॥४॥

रचना : कबीर

निर्भय निर्गुण

निर्भय निर्गुण गुण रे गाऊंगा

मूल कमल दृढ़ आसन बांधू जी,
उलटी पवन चढ़ाऊंगा

मन ममता को थिर कर लाऊं जी,
पांचो तत्व मिलाऊंगा

इंगला पिंगला सुखमन नाड़ी जी,
तिरवेणी पर न्हाऊंगा

पांच पच्चीसो पकड़ मंगाऊं जी,
एकहि डोर लगाऊंगा

शून्य शिखर पर अनहद बाजे जी,
राग छतीस सुनाऊंगा

कहत कबीर सुनो भाई साधो,
जीत निशान घुराऊंगा

रचना : कबीर

काची छे काया

काची छे काया थारी, झुठड़ी छे माया राम
झुठड़ा सा लेख लिखाया राम राम राम
काची हो, कौन घड़ेली थारी काया हो जी जी जी

घट ही में गंगा राम
घट ही में जमुना राम
घट ही में तीरथ न्हाया राम राम राम
काची हो...

घट ही में ताला राम
घट ही में कुंजी राम
घट ही में खोलनहारा राम राम राम
काची हो...

घट ही में अम्बा राम
घट ही में अम्बली राम
घट ही में सेवनहारा राम राम राम
काची हो...

मछिंदर प्रताप जती
गोरख बोले
समझ्या सो ही नर पाया राम राम राम
काची हो...

रचना : गोरखनाथ

जग बौराना

साधो, देखो जग बौराना।
साँची कहौ तो मारन दोडे झूँठे जग पतियाना।
हिंदू कहत है राम हमारा मुसलमान रहमाना।
आपस में दोउ लड़े मरत हैं मरम कोऊ ना जाना ।। धृ ।।
साधो, देखो जग बौराना

बहुत मिले मोहिं नेमी धर्मी प्रात करैं असनाना।
आतम छोड़ि पत्थर पूजैं तिनका थोथा ज्ञाना।
आसन मारि डिंभ धरि बैठे मन में बहुत गुमाना।
पीपर-पाथर पूजन लागे तीरथ-बरत भुलाना ।।१।।
साधो, देखो जग बौराना।

माला पहिरे टोपी पहिरे छाप-तिलक अनुमाना।
साखी सब्दै गावत भूले आतम ख़बर न जाना।
घर घर मंत्र जो देत फिरत हैं माया के अभिमाना।
गुरुवा सहित सिष्य सब बूड़े अंतकाल पछताना ।।२।।
साधो, देखो जग बौराना।

बहुतक देखे पीर औलिया पढ़ैं किताब कुराना।
करैं मुरीद कबर बतलावैं उनहूँ ख़ुदा न जाना।
हिंदु की दया मेर तुरकन की दोनों घर से भागी।
वह करै जिबह वो झटका मारै आग दोऊ घर लागी ।।३।।
साधो, देखो जग बौराना।

या बिधि हँसत चलत हैं ,हमको आप कहावैं स्याना।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो, इनमें कौन दिवाना ।।४ ।।
साधो, देखो जग बौराना ।

रचना : कबीर

"साधो साधो" carries a resounding appeal to shed division, reconnect with our essence, and walk the path of genuine spirituality. Kabir gently urges seekers to reflect deeply, drawing attention to the बौराना world - a state of collective chaos and spiritual disconnection. He highlights the folly of the world lost in illusions, where truth is met with hostility and fiction is easily embraced, and reminds us of the need to rise above trivial conflicts and rediscover the essence of the divine.

साधो रे

साधो ये मुरदों का गांव

पीर मरे पैगम्बर मरिहैं
मरि हैं जिन्दा जोगी
राजा मरिहैं परजा मरिहै
मरिहैं बैद और रोगी

चंदा मरिहै सूरज मरिहै
मरिहैं धरणि आकासा
चौदा भुवन के चौधरी मरिहैं
इन्हूं की का आसा

नौहूं मरिहैं दसहूं मरिहैं
मरि हैं सहज अठ्ठासी
तैंतीस कोट देवता मरि हैं
बड़ी काल की बाजी

नाम अनाम अनंत रहत है
दूजा तत्व न होइ
कहत कबीर सुनो भाई साधो
भटक मरो ना कोई

रचना : कबीर

माटी कहे कुम्हार से

माटी कहे कुम्हार से, तू क्या रोंदे मोहे,
एक दिन ऐसा आएगा, मैं रोंदूगी तोहे ।

आये हैं तो जायेंगे, राजा रंक फ़कीर,
एक सिंघासन चडी चले, एक बदे जंजीर ।

दुर्बल को ना सतायिये, जाकी मोटी हाय,
बिना जीब के स्वास से लोह भसम हो जाए ।

चलती चक्की देख के दिया कबीर रोये,
दो पाटन के बीच में बाकी बचा ना कोई ।

दुःख में सुमिरन सब करे, सुख में करे ना कोई,
जो सुख में सुनिरण करे, दुःख कहे को होए ।

पत्ता टूटा डाल से ले गयी पवन उडाय,
अबके बिछड़े कब मिलेंगे दूर पड़ेंगे जाय ।

कबीर आप ठागायिये और ना ठगिये,
आप ठगे सुख उपजे, और ठगे दुःख होए ।

रचना : कबीर

Kabir's doha teaches principles of patience, contentment, ethical action, which are closely tied to ecology. Chasing desires without self-restraint only leads to suffering and dissatisfaction. By practicing simplicity and mindfulness, humanity can reduce its ecological impact. Just as actions determine outcomes, sustainable efforts can heal the Earth, while greed and exploitation will worsen crises.

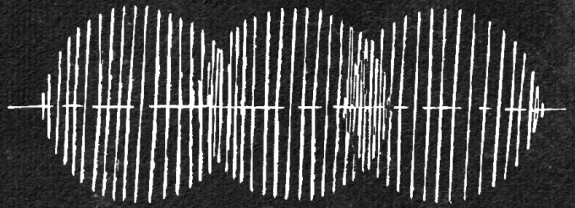

धीरे धीरे रे मना

धीरे-धीरे रे मना, धीरे सब कुछ होई ॥ धृ॥
माली सींचे सौ घड़ा, ऋतु आए फल हो

रूखा-सूखा खाइके, ठंडा पानी पीये ।
देख पराई चूपड़ी, मत ललचावे जी ॥ १॥

करै बुराई सुख चहै, कैसे पावे कोई।।
रोपै पेड़ बबूल का, आम कहां ते होई ॥२॥

सुखिया ढुंढत मैं फिरू, सुखिया मिले न कोई ।
जाके आगे दु:ख कहुँ, पहले उठे रोई ॥३॥

रचना : कबीर

वृक्षवल्ली आम्हा सोयरे

वृक्षवल्ली आम्हा सोयरी वनचरे। पक्षी ही सुस्वरे आळविती।। धृ ।।
येण सुखे रुचे एकांताचा वास। नाही गुणदोष अंगा येत।। १ ।।
आकाश मंडप पृथिवी आसन। रमे तेथे मन क्रिडा करी।। २ ।।
कंथाकमंडलू देह उपचारा। जाणवितो वारा अवसरु।। ३ ।।
हरिकथा भोजन परवडी विस्तार। करोनि प्रकार सेवु रुची।। ४ ।।
तुका म्हणे होय मनासी संवादु। आपलासी वाद आपणासी।। ५ ।।

रचना : संत तुकाराम

अवघा रंग एक झाला

अवघा रंग एक झाला। रंगी रंगला श्रीरंग।। धृ ।।
मीतूपण गेले वाया। पाहता पंढरीच्या राया।। १ ।।
नाही भेदाचे ते काम। पळोनी गेले क्रोध काम।। २ ।।
देही असोनी विदेही। सदा समाधिस्थ पाही।। ३ ।।
पाहते पाहणे गेले दूरी। म्हणे चोखिया ची महारी।। ४।।

रचना : संत सोयराबाई

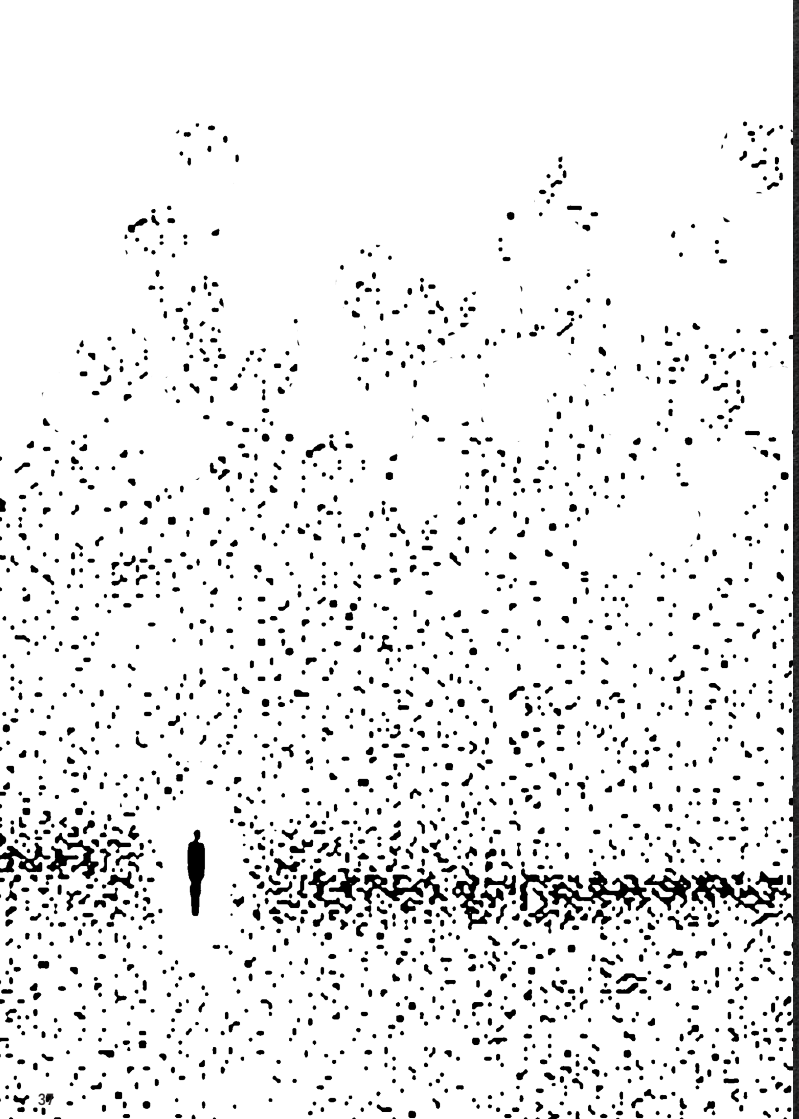

This abhang by Soyarabai, ***"अवघा रंग एक झाला"****, beautifully aligns with the philosophy of ecological conservation by emphasizing unity and the dissolution of duality. Just as the abhang speaks of distinctions - 'I' and 'you', merging into the oneness of the divine, ecological conservation requires us to transcend the human-centric perspective and recognize the interconnectedness of all life. The eradication of anger* ***(Krodh)*** *and desire* ***(Kaam)*** *reflects the need to let go of destructive tendencies like greed and overexploitation of nature.*

Soyarabai's humility and surrender reflect the atitude we need toward
nature: gratitude, reverence, and the acknowledgment that all beings share the same divine essence, urging us to protect and nurture the environment as sacred.

चादर झिनी

सदा राम रस बीनी रे चादर झिणी रंग झिणी हो झिणी

अष्ट कमल दल चरखा चाले, पाँच तत्त्व गुण तिनी
करम की पूनी कातण बैठी, कुकरी सुरत महिणी !!१!!
चादर झिणी रंग झिणी हो झिणी

इंगला पिंगला लाना किनो, सुखमण या भर दिनी,
नवदस मास या बितण लागा, ठीक ठाक कर दीनी !!२!!
चादर झिणी रंग झिणी हो झिणी

या चादर धोबी के दिनी शबद ताल धर दिनी
सुरत शिला पर पकड पछाटी, इन वद उजली किनी !!३!!
चादर झिणी रंग झिणी हो झिणी

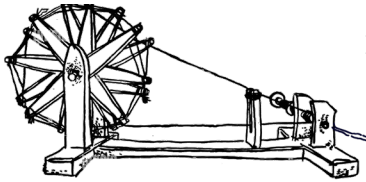

या चादर रंगरेज को दिनी, भांत भांत रंग दिणी
प्रेमपती का रंग चढाया, पिली पितांबर किनी !!४!!
चादर झिणी रंग झिणी हो झिणी

या चादर सुरनर मुनी ओढी, ओढ के मैली किनी,
अर्जुन ओढ महरम नही जाणा, मुरख मैली किणी !!५!!
चादर झिणी रंग झिणी हो झिणी

ध्रुव ओढी प्रह्लाद ने ओढी, सुखदेव निर्मल किनी
साहेब कबीर ने जुगत से ओढी, ज्यो की त्यो कर दिनी !!६!!
चादर झिणी रंग झिणी हो झिणी

सदा राम रस भीनी रे चादर झिणी रंग झिणी हो झिणी

रचना : कबीर

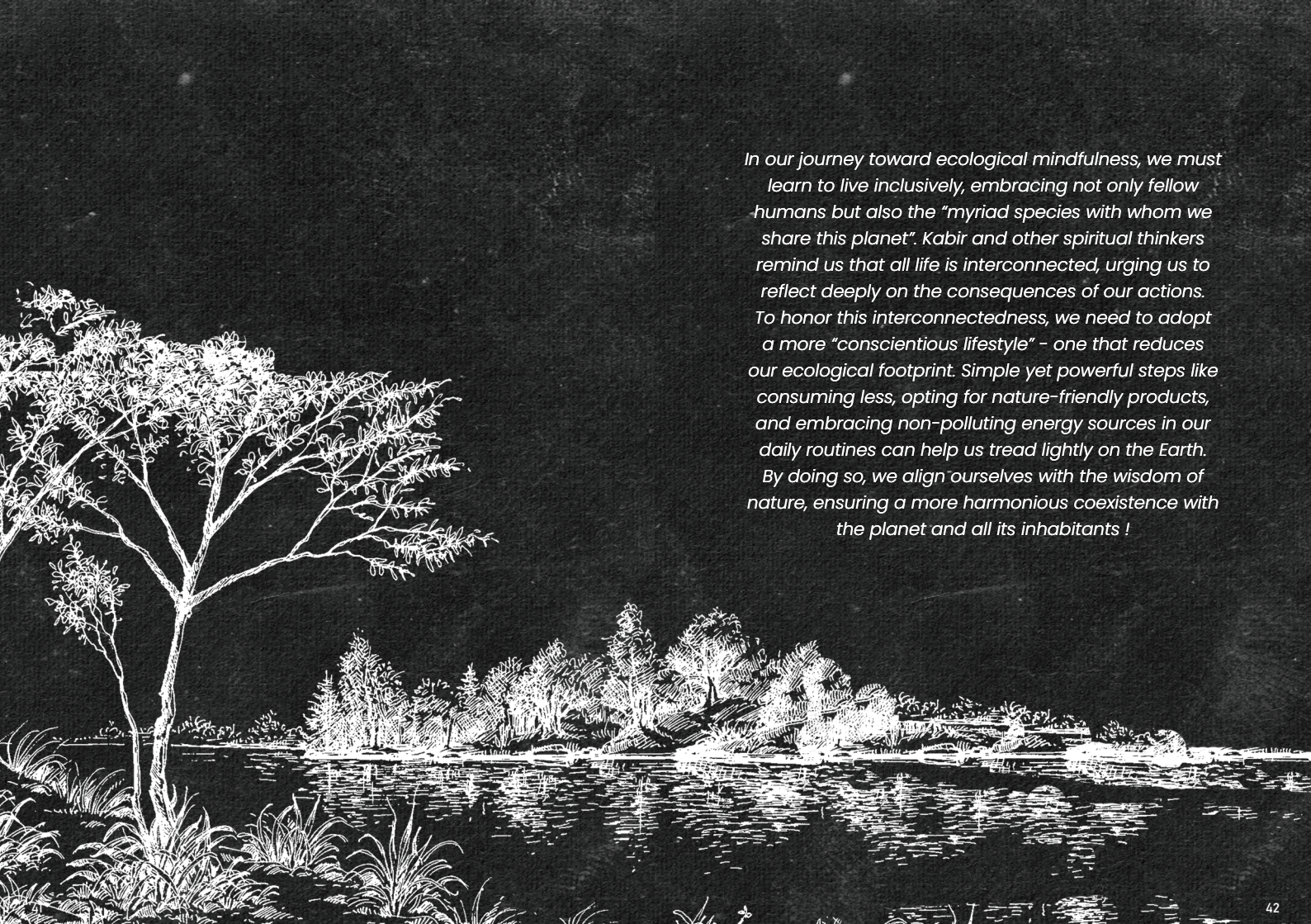

In our journey toward ecological mindfulness, we must learn to live inclusively, embracing not only fellow humans but also the "myriad species with whom we share this planet". Kabir and other spiritual thinkers remind us that all life is interconnected, urging us to reflect deeply on the consequences of our actions. To honor this interconnectedness, we need to adopt a more "conscientious lifestyle" - one that reduces our ecological footprint. Simple yet powerful steps like consuming less, opting for nature-friendly products, and embracing non-polluting energy sources in our daily routines can help us tread lightly on the Earth. By doing so, we align ourselves with the wisdom of nature, ensuring a more harmonious coexistence with the planet and all its inhabitants !

Painting : Yogesh Kurhade

Pralay

ecological society